## अध्याय : द्वितीय

# मेवाड़ का मुस्लिम आक्रमणों के विरूद्ध प्रतिरोध (8वीं से 17वीं शताब्दी)

## (सनातन धर्म और संस्कृति के संरक्षण के सन्दर्भ में)

मेवाड़ राज वंश का गौरव प्राचीनकाल से वर्तमान समय तक प्रकाशमान रहा है। क्योंकि यह घराना हिन्दुस्तान के सब राजाओं में शिरोमणि और बड़ा माना जाता रहा है। हिन्दुस्तान के लोगों में क्या छोटा और क्या बड़ा ? जिसको पूछिये, यही जवाब देगा कि, उदयपुर के महाराणा "हिन्दुवा सूरज" है। कदाचित मेरी यह मान्यता अतिश्योक्ति पूर्ण न हो इसलिये सर्वप्रथम अन्य ऐतिहासिक ग्रन्थों, विदेशी यात्रियों, लेखकों और पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर इसका इस लेख में उल्लेख किया जा रहा है जो प्रामाणिक इतिहास लेखन की दृष्टि से आवश्यक है। इस लेख में मेवाड़ के राजवंश का गौरव समझने के पहले इस वंश के आदिपुरूष अयोध्या के इक्ष्वाकु कुलीन सूर्यवंशी रामचन्द्र के वंशधर के इतिहास की जानकारी आवश्यक है। इसी दृष्टि से इस लेख में अन्य देशों व धर्मों के लोगों द्वारा लिखित उन सफरनामों और तवारीखों के उद्धरणों को उद्धृत करता हूँ जिनमें मेवाड़ के राजाओं के विषय में निष्पक्ष रूप से लिखा है। उस में चीनी यात्री हुएनसांग जो सन् 629 ईस्वी (हि. 8 = स. 686 वि.) में हिन्दुस्तान की यात्रा पर आया था, ने अपनी पुस्तक की दूसरी जिल्द के पृष्ठ 266–67 पर वल्लभी नगर जो उदयपुर के राजाओं के पूर्वजों की राजधानी मानी जाती है, के विषय में लिखता है कि – यह प्रदेश घेरे में 6000 ली. (दूरी एक परिमाप) है।[1]

महाभारत के हरिवंश तथा कालीदास के रघुवंश और श्रीमद्भागवत के नवम् स्कन्ध की पीढ़ियों में कुछ–कुछ अन्तर है, परन्तु भागवत के अनुसार इस वंश की वंशावली जो प्रामाणिक ऐतिहासिक ग्रन्थों एवं मेवाड़ और अन्य स्थानों से उपलब्ध प्रशस्तियों में मिलती है जो हिन्दुस्तान के अधिक हिस्सों में प्रचलित हैं। उनमें से सूर्यवंशी अयोध्या के वंशधर, शासकों और मेवाड़ के इतिहास में उपलब्ध है।

महाराणा राजसिंह के समय प्रसिद्ध लेखक रणछोड़ भट्ट द्वारा लिखित एवं उत्कीर्ण राजसमन्द की झील पर स्थापित विश्वविख्यात राज–प्रशस्ति के प्रथम सर्ग के श्लोक संख्या 28–29 एवं द्वितीय सर्ग के श्लोक संख्या 31–38 में मेवाड़ राजवंश के शासकों की जो सूची मिलती है यह भागवत पुराण के स्कन्ध 9 पर आधारित है। इसमें स्पष्ट उल्लेख हुआ है कि मेवाड़ का राजवंश अयोध्या के अन्तिम शासक सुमित्र के पश्चात् कालीन शासकों से सम्बन्धित है। जिसका उल्लेख राज–प्रशस्ति में इस प्रकार उत्कीर्ण है।

**सुमित्रस्तु सुमित्रात इक्ष्वांको रन्वयो भवत्।।**

**उक्ता भागवते स्कंधे नवमे ते मयोदिता।। – श्लोक 31**

**द्वाविंशत्यगशतक मेषां संख्या कृतावदे।।**

**प्रसिद्धा त्सूर्यवंशस्था द्वजनाभो भवत्ततः।। – श्लोक 32**

**तस्मात्कनकसैनोस्य नहसीनोंगरत्यतः।।**

**.....भूपः सिंहरथस्त्वैतै अयोध्या वासिनौनृपाः।। – श्लोक 35**

हिन्दुस्तान के जितने सूर्यवंशी राजपूत हैं, वे सब अपना मूल पुरूष सुमित्र को मानते हैं। इसके सम्बन्ध में कविराजा श्यामलदास का विचार है

कि, अयोध्या में सूर्यवंशियों का राज्य सुमित्र तक रहा होगा अथवा राजा सुमित्र के पुत्रों ने वेदमत (वैदिकधर्म) छोड़कर बौद्धधर्म स्वीकार कर लिया होगा इसलिये ब्राह्मणों ने उनके नाम सूर्यवंश की वंशावली से निकाल दिये होंगे। यह नहीं कि, वंश ही नष्ट हो गया हो। क्योंकि सूर्यवंश के बड़े राजा रामचन्द्र के पुत्रों के वंश में उदयपुर के राजवंश का होना बहुत ठीक मालूम होता है।

## 2.0 विदेशी यात्रियों एवं यूरोपीय लेखकों के वृत्तान्तों में प्रतिबिम्बित मेवाड़ –

सुलेमान सन् 851 ई. में और दूसरा अबूजैदुलहसन सन् 867 ई. में हिन्दुस्तान की यात्रा पर आया था। इन दोनों को अरबी पुस्तकों का रेनाडाट ने अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया है।

हिन्दुस्तान और चीन के लोग मानते हैं कि विश्व में चार बादशाह है। उन में अरब का बादशाह प्रथम, चीन का दूसरा, यूनान का तीसरा और चौथा वल्लभी (बलहारा) माना जाता है जो मुर्मियल उजुन अर्थात् उन लोगों का राजा, जिनके कान बिंधे हुए है।

हिन्दुस्तान में यह बलहारा (वल्लभी का) बहुत ही प्रसिद्ध राजा है। यद्यपि अन्य राजा अपने अपने राज्य में स्वाधीन है, तो भी उनको बड़ा मानते हैं। जब वह उनके पास दूत भेजता है तो, वे उसको बड़ा और प्रतिष्ठित मान कर बड़ी इज्जत के साथ उसका आदर सम्मान करते हैं। वह अरब लोगों की तरह बड़ा दानवीर है। उसके पास अनेक घोड़े, हाथी और बहुत सा खजाना है। उसके सिक्के चलते हैं, जो तातारी द्रम कहलाते हैं। उन सिक्कों का वजन अरबी द्रम से आधा द्रम अधिक होता है। वे इस राज्य के ठप्पे से बनते हैं जिसमें राजा के राज्याभिषेक का

सम्वत् (सन् जुलूस) लिखा है। वे अपना सन् अरब लोगों की तरह मुहम्मद के समय से नहीं गिनते। बल्कि अपने राजाओं के समय से गिनते हैं। इन राजाओं में से कई एक तो दीर्घायु है और किसी किसी ने पचास वर्ष से अधिक समय तक राज्य किया है।[2]

"बलहारा इस खानदान के सभी राजाओं का विरूद्ध है, न कि किसी व्यक्ति विशेष का नाम। इस राजा का आधिपत्य क्षेत्र काम 6000 ली. मील है।

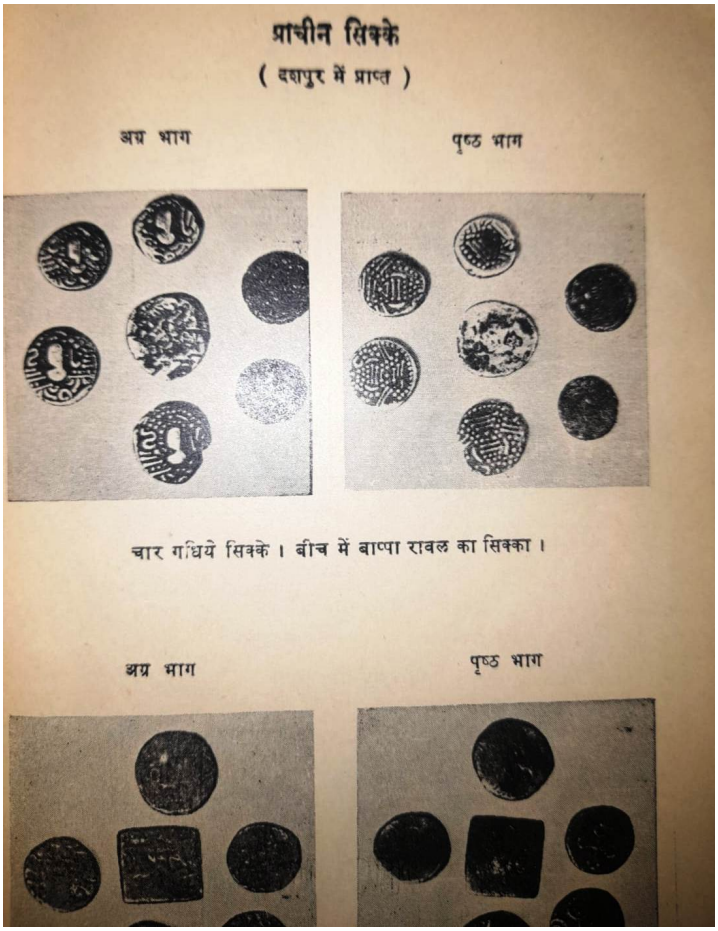


बलहारा से "वल्लभीवाला तात्पर्य है। इन यात्रियों के हिन्दुस्तान में आने के समय चित्तौड़ पर महारावल खुमाण राज्य करते थे जिनको लोग बलहारा अर्थात् "बल्लभी वाला" नाम से पुकारते होगें। क्योंकि वल्लभी राज्य का पतन होने के बाद मेवाड़ का राज्य स्थापित हुआ। यह सर्वमान्य

प्रथा है कि एक जगह से दूसरी जगह जाकर बसने वाले लोग उसके पूर्व निवास स्थान के नाम से पुकारे जाते थे। जैसे हिन्दुस्तान के पठान बादशाह अफगान और तुर्किस्तान के मुगल तुर्क कहलाते थे।

अल्बेरूनी की पुस्तक तहकीक–ए–हिन्द में 10वीं सदी के भारत के राजवंशों में लाहौर के एक हिन्दू राजवंश का उल्लेख हुआ है। जो काबुल एवं लाहौर पर शासन करता था। उस वक्त सामंते नामक एक ब्राह्मण इन दोनों राज्यों (काबुल व लाहौर) पर राज्य करता था। उसी के उत्तराधिकारियों में कई राजपूत राजाओं के नाम मिलते हैं। इन नामों में पंजाब का राजा जयपाल का भी नाम है। जयपाल के पुत्र अनंगपाल के चलाये सिक्कों पर (रूपयों) सामंत का भी नाम मिलता है। (जर्नल ऑफ रॉयल ऐशियाहटिक सोसायटी, खण्ड IX)

मेवाड़ के राजा खुमाण का नाम रोम के सिजरमहान की भांति विख्यात रहा है। मेवाड़ के राजा खुमाण रावल के राजत्वकाल के 100 वर्ष पहले याने 976 ई. सन् पंजाब में जयपाल हुआ। जिसने सुल्तान महमूद गजनी के विरूद्ध राजाओं का संघ बना कर मुस्लिम आक्रमणों का प्रतिरोध किया था। स्यालकोट लाहौर के हिन्दू राजवंश को अल्बेरूनी ने लाहौर के साथ पश्चिमी भारत के प्रसिद्ध राजवंशों का वर्णन किया है। टॉड ने इसी आधार पर किया कि भारत में कन्नौज के राठौड़, चोटिल के बल्ल, मेवाड़ के गुहिल, जैसलमेर के भाटी व लाहौर के बुस की सूची, बाप्पा रावल से शक्ति कुमार तक के चौदह राजाओं की वंशावली का वर्णन मिलता है। मेवाड़ राजमहल में उपलब्ध भट्ट ग्रन्थ एवं मेवाड़ राजवंश की वंशावली के साथ आहड़ से मिले शक्तिकुमार के शिलालेख से मिलान करें तो निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह राजवंश अयोध्या के इक्ष्वाकु कुल के सूर्यवंशी भगवान रामचन्द्र के ही वंशज है।[3]

टॉड ने अपने ग्रन्थ टॉडनामा में मेवाड़ के राजवंश पर भट्ट ग्रन्थ, चित्तौड़ से मिले मानमौर्य की मान सरोवर की प्रशस्ति तथा आहड़ से मिले राजा शक्ति कुमार की प्रशस्ति के अलावा जैन साहित्य, पुराणों व देशी विदेशी ऐतिहासिक स्त्रोतों के आधार पर मेवाड़ के इस प्राचीन प्रतिष्ठित राजवंश पर अनुसंधान इसके गौरव को उजागर किया। टॉड ने लिखा है कि मौर्यवंशी मानमौर्य जो 8वीं सदी में चित्तौड़ का शासक था, उसका सम्बन्ध भारत के चक्रवर्ती सम्राटों से था, उससे बाप्पा रावल ने राज्य हस्तगत किया। मौर्यवंशी चित्तौड़ नरेश उज्जैन (अवन्ति) से अयोध्या (साकेत) व पाटलीपुत्र तक अपना प्रभाव रखते थे। युनानी वृत्तान्तों में भी इसका उल्लेख है।

सन् 1615 ई. में सर टामसरो ने अपने सफरनामे के 19वें पृष्ठ पर चित्तौड़ का वर्णन इस तरह किया है –

"यह शहर राणा के राज्य क्षेत्र में है, जिसको इस बादशाह ने थोड़े दिन पहले अपने अधीन किया है, बल्कि कुछ रूपया पैसा लेकर अपनी अधीनता स्वीकार करवायी थी। बादशाह अकबर ने इस शहर पर अधिकार किया था, जो इस बादशाह का पिता था। राणा उस पोरस के वंश में से है, जिस बहादुर हिन्दुस्तानी राजा को सिकन्दर ने विजित किया था।"

इस तरह टॉमसरो के पादरी एडवर्ड ने अपने सफरनामे के पृष्ठ 77–78 पर चित्तौड़ का विवरण निम्नलिखित रूप से लिखा है –

"चित्तौड़ एक बहुत प्राचीन राज्य का प्रमुख नगर एक ऊंचे पहाड़ पर स्थित है। इसकी शहरपनाह (चार दीवारी) का घेरा कम से कम 10 मील में होगा। आज तक यहां पर 200 से अधिक मंदिर और पत्थरों के बने बहुत ही अच्छे एक लाख मकानों के खण्डर दिखाई देते हैं। अकबर

बादशाह ने इसको राणा से जीत ही लिया था, जो राणा प्राचीन हिन्दुस्तानी रईस है।"

जान एल्बर्ट डी मेंडलस्लो जर्मन की फ्रांसीसी भाषा में लिखी पुस्तक के अंग्रेजी के अनुवाद से ही प्रकट होता है जैसा कि, हेरिस के सफरनामा की पहली जिल्द के पृष्ठ 758 पर लिखा है कि अहमदाबाद शहर से कुछ दूरी पर मरवा के बड़े पहाड़ दिखाई देते हैं, जो आगरा की तरफ लम्बाई में 210 मील से अधिक फैले हुए है और 300 मील से अधिक औयो की तरफ। जहां विकट चट्टानों के बीच चित्तौड़ में शासक राणा का निवास स्थान था। जिसको मुगल और पाटन (गुजरात) के बादशाह की सम्मिलित सेनायें भी कठिनाई से जीत सकी।[4]

बर्नियर के सफरनामा की पहली जिल्द के पृष्ठ 232–233 पर इस प्रकार लिखा है –

भारत में खिराज न देने वाले एक सौ से अधिक राजा है, जो बहुत शक्तिशाली है और सम्पूर्ण साम्राज्य में फैले हुए है। जिनमें कोई आगरा, दिल्ली के पास और कोई दूर है। इन राजाओं में 15 या 16 शासक तो धनाढ्य और बहुत शक्तिशाली है। विशेषरूप से मेवाड़ के राणा, जो पूर्व में राजाओं का शंहशाह समझा जाता था और पोरस के खानदान में माना जाता था।

मेजर जनरल कनिंघम ने अपनी रिपोर्ट के चौथे खण्ड के पृष्ठ 95–96 पर लिखा है कि, "पिछले (प्राचीन) अथवा बीच के (मध्यकालीन) हिन्दू जमाने के बारे में अनुमान है कि, गुहिल या गुहिलोत नामक मेवाड़ का राजवंश किसी समय में आगरा पर राज्य करता था। सन् 1867 ई. में दो हजार से भी अधिक छोटे–छोटे चांदी के सिक्के आगरा में हुई खुदाई

में निकले थे। उन सभी पर प्राचीन संस्कृत अक्षरों में लिखा लेख स्पष्ट रूप से ''श्री गुहिल'' या ''गुहिल श्री'' पढ़ने में आया। ये सिक्के सम्भवतः श्री गोहादित्य का गुहिल के होंगे, जो मेवाड़ के गुहिलोत राजवंश की नींव डालने वाला था। लेकिन गुहिल का शासनकाल तो सन् 750 ई. में था और वह लिपि उस समय से पहले की मालूम होती है। कदाचित् ये सिक्के बाद के गोहा या ग्रहादित्य के हों, जो इसी खानदान के राजा शिलादित्य का पुत्र और गुहिलोत या सीसोदिया राजवंश का प्रथम राजा था। यह खानदान बलहारा, वल्लभी अथवा सौराष्ट्र के खानदान से निकला था, जो उस देश के पतन के पश्चात् वहाँ से निकल गये, परन्तु उस राजा का ठीक से समय मालूम नहीं। अनुमान है कि, छठी सदी ईसवी के लगभग रहा होगा। सौराष्ट्र के राजाओं का राज्य किसी समय में इतना बड़ा था, जिससे निस्संदेह  उसका आगरे तक पहुँच जाना सम्भव है।

लुई रासेलेट ने अपने मध्य हिन्दुस्तान के यात्रा विवरण के पृष्ठ 200 पर लिखा है कि, चित्तौड़ की प्रसिद्ध मोर्चाबन्द बस्ती, जो एक अकेले पहाड़ की चोटी पर बसी हुई है, मेवाड़ की पुरानी राजधानी थी। यह सदियों तक मुसलमानों के आक्रमणों के विरूद्ध स्वाधीनता व स्वाभिमान की रक्षार्थ बचाव की अन्तिम सुदृढ़ जगह थी।[5]

एचिसन की अहदनामों की किताब जिल्द तीसरी के पृष्ठ 3 पर लिखा है कि ''उदयपुर का राजवंश हिन्दुस्तान के राजपूत रईसों में सर्वाधिक गौरवशाली और उच्च श्रेणी का है। यहाँ के राजा को हिन्दू लोग अयोध्या के प्राचीनकाल के राजा राम का प्रतिनिधि समझते हैं। जिनके वंश में से मेवाड़ में राजा कनकसेन ने लगभग सन् 144 ई. में इस राजवंश की नींव डाली थी। डूंगरपुर, सिरोही और प्रतापगढ़ के राज्य भी यहीं से निकले हैं। मराठा लोगों की सत्ता की नींव डालने वाला शिवाजी और

महाराष्ट्र में सतारा का भोंसला राजवंश उदयपुर के घराने से ही निकले थे। हिन्दुस्तान में किसी राज्य ने यहाँ से बढ़ कर अधिक वीरता के साथ मुसलमानों का सामना नहीं किया। इस घराने का अभिमान है कि, उन्होंने कभी किसी मुसलमान बादशाह को लड़की नहीं दी। कई वर्ष तक उन राजपूतों के साथ शादी व्यवहार छोड़ दिया, जिन्होंने बादशाहों को लड़की दी थीं। डॉक्टर हंटर ने भी अपने गजेटियर में एचिसन के अनुसार ही लिखा है।''

हेरिस के अनुसार ''राजा राणा, जिसको तैमूरलंग ने परास्त किया, वह सब इतिहासवेत्ताओं के अनुसार महाराजा पोरस के खानदान से था।'' हिन्दुस्तान के एक राजा का वर्णन सुन कर, जो बुद्धिमानी और वीरता के लिए प्रसिद्ध था और पोरस के खानदान में पैदा होने के कारण प्रसिद्ध था और जिसका प्रदेश बादशाह ने शीघ्र ही विजित करने का विचार किया। विशेष रूप से इस कारण कि, यह प्रदेश उसके मौरूसी (पैतृक) राज्य और नये विजित किये हुए प्रदेश के बीच में था। इस राजा की ''राणा'' पदवी थी, जो विरूद्ध उसके खानदान के सभी राजाओं को हिन्दुस्तान के प्राचीन विधान (परम्परा) के अनुसार दिया जाता था। वह राजा पौरस के राजवंश के योग्य था। यदि उसकी अच्छी मदद करने वाला कोई दूसरा राजा भी होता तो, वह अपने प्रदेश की आजादी फिर से प्राप्त कर लेता। फिर भी उसने विशेष प्रयत्न किये, जो इस प्रदेश के इतिहास में हमेशा याद रहेंगे, एक शक्तिशाली हिन्दुस्तानी सरदार के रूप में लिखा है।

मिल कृत हिन्दुस्तान के इतिहास की, सातवीं जिल्द के पृष्ठ 57 पर इस प्रकार लिखा है कि ''उदयपुर के राणा अपनी उत्पत्ति राम के पुत्र लव से बतलाते हैं, इसलिये वे सूर्यवंशी समझे जाते हैं और राजपूतों में गुहिलोत वंश की सीसोदिया शाखा में हैं। सब राजपूत राजाओं में बड़े

माने जाते हैं तथा दूसरे राजा लोग गद्दी पर बैठने के समय उनके हाथ से तिलक स्वीकार करते हैं। इसका अर्थ यह है कि, उनकी गद्दीनशीनी राणा को स्वीकार है।''

इलियट की तवारीख, की प्रथम जिल्द के पृष्ठ 354–360 पर बलहारा सौराष्ट्र और वल्लभी के नाम से इस वंश का वर्णन कई इतिहास लेखकों का हवाला देकर लिखा है।[6]

थार्नटन ने अपने गजेटियर के पृष्ठ 723 पर लिखा है कि, ''उदयपुर का राजवंश राजपूतों में अत्यन्त ही प्रसिद्ध है। दिल्ली के शाही खानदान के साथ वहाँ के राजाओं ने कभी रिश्तेदारी नहीं की।''

रेनाल्ड ने लिखा है कि, ''उदयपुर के राणा हमेशा राजपूत राज्यों के सरदार समझें गये हैं। जो लोग अन्य किसी तरह से उनको बड़ा नहीं मानते, वे भी पुरानी परम्परा के अनुसार उनकी इज्जत करते हैं। इससे प्रमाणित होता है कि, राणा के पूर्वजों के हाथ में पहले, पूरे अधिकार रहे थे और सम्भवतः सारा राजपूताना उनके अधीन एक ही राज्य था।''

विलियम राबर्टसन की तवारीखें हिन्दुस्तान के पृष्ठ 302 में लिखा है कि, ''चित्तौड़ के राजा जो हिन्दू राजाओं में सबसे प्राचीन समझे जाते हैं और राजपूत जातियों में सबसे श्रेष्ठ हैं, अपनी उत्पत्ति पोरस के खानदान से बतलाते हैं। अर्म भी रार्बटसन के अनुसार ही लिखता है।''

मार्शमेन की तवारीख, की पहली जिल्द के पृष्ठ 23 पर लिखा है कि ''उदयपुर का खानदान राम के बड़े पुत्र लव से पैदा हुआ है इसीलिये हिन्दुस्तान के हिन्दू राजाओं में बड़ा माना जाता है। पूर्व में यह राजवंश सूरत के प्रदेश में गया और उसने खम्भात की खाड़ी में वल्लभीपुर को अपनी राजधानी बनाया।''

माल्कम की तवारीख सैण्ट्रल इण्डिया (मेमाअर्स ऑफ सैण्ट्रल इण्डिया) की पहली जिल्द के पृष्ठ 27–28 पर मालवा के बादशाह महमूद खिलजी के वर्णन में लिखा है कि – ''उसको चित्तौड़ के राणा कुम्भा ने कैद कर लिया और फिर मेहरबानी, दया करके छोड़ दिया और उसका प्रदेश वापस दे दिया। उस समय के वर्णन में सभी इतिहास ग्रन्थ लिखते हैं कि, कुछ राजपूत राजाओं ने, जिनमें विशेष रूप से चित्तौड़ के राणाओं ने अपने आसपास के मुसलमानों से बड़ी कठोर लड़ाइयाँ कर उन पर विजयें प्राप्त कीं।'' इसी इतिहास के 36वें पृष्ठ पर पाद टिप्पणी लिखी है कि, ''उदयपुर के राणा जो राजपूतों में सबसे ऊंचे राजवंश के हैं, हमेशा यह गर्व करते हैं कि, उन्होंने मुगल बादशाहों के साथ कभी विवाह सम्बन्ध स्थापित नहीं किया।''

मुसलमानों मुवर्रिखों (इतिहासवेत्ताओं) ने लिखा है कि, मालवा के बादशाहों की कठिनाइयों, उनकी धोखाधड़ी और अपनी घरेलू फूट के कारण से उत्पन्न हुई। जिसका मुख्य आधार चित्तौड़ के राणा सांगा की बहादुरी और योग्यता थी। वह अपने समय में राजपूतों का सरगिरोह (प्रमुख सेनापति) माना जाता था। बादशाह बाबर ने ''तुजुक–इ–बाबरी'' में लिखा है कि, ''इस प्रसिद्ध हिन्दू राजा ने शाह महमूद के ऊपर कई बार विजय प्राप्त की। उससे बहुत से सूबे छीन लिये – जैसे रामगढ़, सारंगपुर और चंदेरी।''

ग्रांट डफने मराठों का इतिहास, की प्रथम जिल्द के पृष्ठ 19–20 लिखा है कि, ''शालिवाहन ने आमेर के राजा का प्रदेश ले लिया, यह राजा सूर्यवंशी राजपूत शासक सिसोदिया राजवंश का था। उसका मूल पुरूष कौशल देश से, जिसको आजकाल अयोध्या (अवध) कहते हैं, निकल कर नर्मदा की तरफ आया और अपना राज्य स्थापित किया, जो शालिवाहन की

विजय के समय तक सोलह सौ अस्सी वर्ष तक बना रहा था। शालिवाहन ने केवल एक स्त्री को छोड़कर, उस वंश के सभी लोगों को कत्ल कर दिया। यह स्त्री अपने कम उम्र के पुत्र के साथ सतपुड़ा के पहाड़ों में जाकर छुप गई। वह लड़का चित्तौड़ के राणाओं के राजवंश की नींव डालने वाला हुआ।''

चित्तौड़ के राणाओं से ही उदयपुर के राणा निकले, जिनका राजवंश हिन्दुस्तान में सबसे पुराना माना जाता है। ऐसा भी वर्णन है कि, मराठा जाति की नींव डालने वाला व्यक्ति इसी उदयपुर के राजवंश से पैदा हुआ था।

एलफिंस्टन कृत हिन्दुस्तान के इतिहास, पृष्ठ 431 पर इस प्रकार लिखा है – ''राजपूत राजा हमीरसिंह, जिसने अलाउद्दीन खिलजी के समय में चित्तौड़ को वापस ले लिया था (1316 ई.)।'' इसी किताब के पृष्ठ 480 पर लिखा है कि, उदयपुर के राणा का राजवंश और जाति, जो पहले गुहिलोत और बाद में सीसोदिया कहलाये, राम से निकले हैं इसलिए वे मौलिक रूप से अयोध्या से सम्बद्ध है। बाद में वे गुजरात में स्थापित हुए, जहाँ से ईडर गये तथा अन्त में टॉड की राय के अनुसार आठवीं सदी ईसवी के शुरू में चित्तौड़ पर स्थापित हुए।[7] सन् 1303 ई. तक, जबकि चित्तौड़ पर अलाउद्दीन के अधिकार और कुछ समय बाद राणा हमीर द्वारा पुनः अधिकार कर लेने तक, उनका (राणाओं का) नाम इतिहास में प्रसिद्ध नहीं हुआ। हमीर, जिसने कि यह कार्य किया था, के बाद कई योग्य शासक हुए और उनके माध्यम से मेवाड़ देश राजपूतों में उस गौरव तक पहुँचा, जिससे सांगा (संग्राम सिंह) बाबर के विरूद्ध युद्ध में उन सभी राजपूतों को ले जाने में सफल हुआ।

1604-05 में सम्राट अकबर द्वारा जारी
राम-सीता की स्वर्ण एवं रजत मुद्राएं

टॉड नामा राजस्थान की पहली जिल्द के पृष्ठ 211 पर इस तरह से लिखा है – मेवाड़ के शासक (महाराजा) राजा कहलाते हैं और सूर्यवंशी अथवा सूर्यवंश की बड़ी शाखा है। ''रघुवंशी'' इनका दूसरा वंशानुगत विरूद्ध है। यह पदवी राम के बाप–दादाओं में से किसी के नाम पर बनी है। सूर्यवंशी राजवंश की प्रत्येक शाखा राम से निकली है। सूर्यवंशी वंश की शाखाओं का वंशवृक्ष लिखने वाले इसको लंका को जीतने वाले से प्रारम्भ होना लिखते है। अधिकांशतः तथ्यों के वादों के कारण विवाद है, लेकिन हिन्दुओं की सभी जातियां जो इस बात पर एक मत हैं कि, मेवाड़ के महाराणा वास्तव में राम की राजगद्दी के उत्तराधिकारी हैं और उनकी ''हिन्दुवा सूरज'' कहते हैं। 36 राजसी (राज करने वाली) जातियों में से सभी उनको प्रथम समझते हैं और उनके कुलीन होने में कभी सन्देह उत्पन्न नहीं हुआ है।

जार्ज टॉमस ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ 196 पर लिखा है कि, ''उदयपुर का राजा वैसी ही स्थिति में है, जैसा कि दिल्ली का बादशाह।''

इसके अतिरिक्त उक्त लेखक ने अपनी पुस्तक में महाराणा के खानदान का बड़प्पन (गौरव) और भी कई स्थानों पर प्रकट किया है।

बादशाह बाबर ने अपनी पुस्तक ''तुजुक–इ–बाबरी'' (हस्तलिखित) के पृष्ठ 243 पर लिखता है कि, ''राणा सांगा की शक्ति इस देश हिन्दुस्तान में इस दरजे की थी कि, अधिकांश राजा और रईस उसके वर्चस्व को मानते थे और उसका अधिकार क्षेत्र दस करोड़ की आमदनी का था। जिसमें हिन्दुस्तान के कायदे के अनुसार एक लाख सैनिकों की गुंजाइश हो सकती है।''

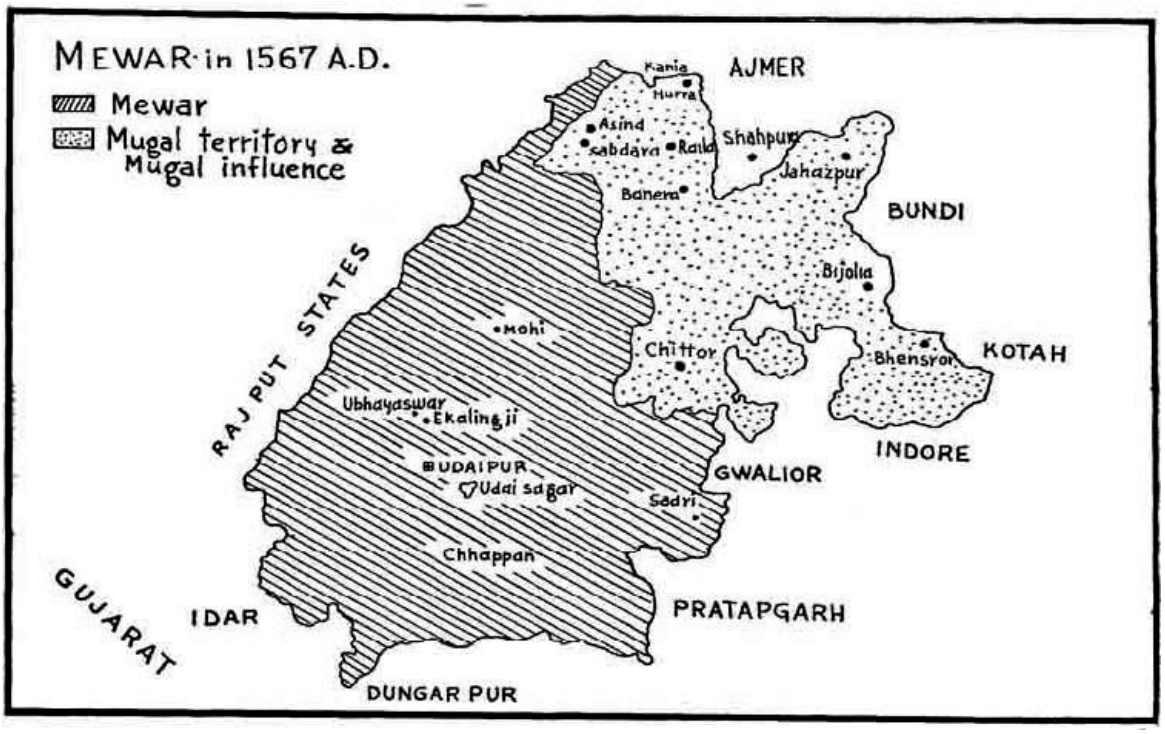


इसी तरह प्रकाशित पुस्तक अकबर नामा की दूसरी जिल्द के पृष्ठ 380 पर लिखा है कि, ''बादशाही जुलूस के बाद अधिकांश ऐसे राजाओं ने भी जो कभी दूसरे बादशाहों के अधीन नहीं रहे थे, अब अधीनता स्वीकार कर ली। लेकिन राणा उदयसिंह ने, जो इस प्रदेश में अपने प्राचीन गौरव का ध्यान रखने वाला था और अपने पूर्वजों के अनुरूप विकट पहाड़ों और

सुदृढ़ किलों के कारण गर्वीला था, बहादुरी से बादशाह की अधीनता स्वीकार नहीं की, इसलिये बादशाह को चित्तौड़ का दुर्ग लेना पड़ा।''[8]

इसी तरह तबकात–इ–अकबरी के पृष्ठ 282 पर लिखा है कि ''हिन्दुस्तान के अधिकांश राजाओं आदि ने बादशाह की अधीनता स्वीकार कर ली थी, लेकिन पहाड़ का राजा राणा उदयसिंह सुदृढ़ दुर्गों और सशक्त सेना के कारण गर्व करता हुआ उपद्रव करता था।'' इसी पुस्तक के पृष्ठ 336 पर पुनः लिखा है कि, ''राणा कीका जो हिन्दुस्तान के राजाओं का सरदफ्तर (प्रमुख) है, चित्तौड़ विजित होने के बाद पहाड़ों में गोगुंदा नामक एक शहर बसा कर जिसमें कि उसने श्रेष्ठ भवनों और बागों को तैयार कराया था, अपनी जिन्दगी सर्कशी (उपद्रवों) के साथ व्यतीत करता था।''

मुन्तखब–उत्–तवारीख के पृष्ठ 213–14 में मौलवी अब्दुल कादिर बदायूनी लिखता है कि, हल्दीघाटी की लड़ाई में राणा का रामप्रसाद हाथी बादशाह की सेना वालों के हाथ लगा। उसको मैं आंबेर के रास्ते से आगरा को ले जाने लगा, लेकिन मार्ग के लोग राणा की लड़ाई और मानसिंह की विजय का हाल सुनकर विश्वास नहीं करते थे।

तवारीख फरिश्ता के पृष्ठ 54 पर मुहम्मद कासिम लिखता है कि, राजा वीर विक्रमादित्य के समय के बाद के राजाओं में से बादशाह जहांगीर के इस समय तक ऐसा कोई भी राजा नहीं रहा, जिसका नाम लिया जा सके। निश्चित् रूप से एक राजपूत शासक राणा है, जिसके राजवंश में मुसलमानों के समय के पहले से ही राज्य चला आ रहा है।

## 2.1 भारत में राष्ट्रीयता की अवधारणा –

भारत में वैदिक काल में ''राष्ट्र'' की अवधारणा श्रुति साहित्य में (वेद, संहिताऐं, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषदों का समावेश परम्परा, नियम, उपनियम है) स्व–शासन प्रणाली के नियमों, संहिताओं व परम्पराओं से प्रतिपादित अर्थ से है। ऋग्वेद का ब्राह्मण ग्रंथ ऐतरेय है, जिसमें 8 प्रकार के राज्यों का वर्णन मिलता है। इनमें साम्राज्य, भौज्य, स्वराज्य, वैराज्य, पारमेष्ठिय राज्य, महाराज्य, आधिपत्यमय साम्राज्य, सामन्तपर्यायी। इनके अतिरिक्त जनराज्य, गणराज्य, राज्य इनका भी वर्णन वेदों में है।[9]

वैदिक कालीन भारत में ''आर्यविधान (Aryan Constitution)'' के अनुसार रावण का साम्राज्य बुरे से बुरा था, परन्तु राजा रामचन्द्र ने रावण के कुशासन को समाप्त कर लंका का साम्राज्य उसके भाई विभिषण को सौंप दिया। राम ने रावण को परास्त कर उसका साम्राज्य आर्यावर्त्त में नहीं मिलाया और न ही लंका को लूटा वरन् वहां के शासन में जनोपयोगी मूल्य आधारित शासन व्यवस्था के लिए लंका की राष्ट्रीयता स्वीकार करते हुए, विभिषण को बराबर सहयोग दिया। मध्ययुगीन भारत में राज्य की अवधारणा एवं आधुनिक युग में यूरोपीय औपनिवेशिक काल में इस्लामिक Code अथवा Eurepeon Code के अनुरूप होने से भारतीय जनता ने विदेशी राज्य अथवा पाश्चात्य राष्ट्रवाद की अवधारणा को कभी भी स्वीकार नहीं किया। इसी कारण भारतीय शासकों ने अपने स्वराष्ट्र, स्वदेश व स्वराज्य की स्थापना हेतु निरन्तर संघर्ष किया। इस दृष्टि से मेवाड़ के महाराणा प्रताप ने भारतीय राष्ट्रवाद के सनातन मूल्यों की स्थापना के लिए अपने पूर्वजों की नीति का अनुसरण किया। अकबर का राष्ट्रवाद, मुस्लिम राष्ट्रवाद था, तो प्रताप का राष्ट्रवाद सदियों से चला आ रहा वैदिक विधि अनुरूप भारतीय राष्ट्रवाद था। प्रस्तुत लेख महाराणा प्रताप के द्वारा

स्वराष्ट्रीयता के उच्चादर्शों से प्रेरित मुगल साम्राज्य के विरूद्ध किए गए स्वाधीनता संघर्ष को प्रतिबिम्बित किया गया है।

## 2.2 भारत के राजवंशों की ऐतिहासिक परम्पराओं के प्रमाणित आधार एवं उनके प्रमाणित दस्तावेज –

ब्रिटिश–भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल ने सन् 1879 में राजपूताने के उस वक्त एजेन्ट दूदी गवर्नर जनरल रहे श्री जी. एच. ट्रेवर सी. एस. को आदेशित कर सभी राजपूत राज्यों के शासकों से उनके वंश व राज्यों के कतिपय दस्तावेजों को संग्रहित कराया। जिन्हें के. सी. सर एलफ्रेड लॉयल ने 1879 में गजेटियर ऑफ राजपूताने में योगदान दिया उसे सन् 1908 में श्री जी. एच. ट्रेवर के इस संग्रहित राजपूताने के राजवंशों के दस्तावेजों के आधार पर श्री सी. एस. बेले ने जो कि उस वक्त बीकानेर राज्य का रेजीडेन्ट था। उसके द्वारा ''दी रूलिंग प्रिंसेज चीफ्स एण्ड लीडिंग परसर्नस इन राजपूताना एण्ड अजमेर'' नामक एक पुस्तक प्रकाशित हई थी।

उक्त पुस्तक में सन् 1908 तक के राजपूताने के राज्यों के राजवंशों, उप–शाखाओं तथा उनके अधिकृत राज्यों का विवरण प्रकाशित किया गया था। जिसकी सूची निम्न तालिका में प्रस्तुत है –

| राजवंश | उप–शाखाऐं | राज्य अधिकृत |
|---|---|---|
| राठौड़ वंश | – | जोधपुर (मारवाड़), बीकानेर, किशनगढ़ |
| गुहिल सिसोदिया | सिसोदिया | उदयपुर (मेवाड़), डूंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़, शाहपुरा |

| | | |
|---|---|---|
| चौहान वंश | 1) हाड़ा चौहान<br>2) देवड़ा चौहान | बुंदी एवं कोटा राज्य<br>सिरोही |
| जाडौन (जादौन) वंश | भाटी | करौली<br>जैसलमेर |
| कच्छावा वंश | नरूक्का | जयपुर राज्य<br>अलवर राज्य |
| झाला वंश | झाला | झालावाड़ |

उत्तर भारत पर मुस्लिम आक्रमणों के दो सदियों पूर्व याने कि अरब आक्रमणों (8वीं सदी) से पहले भारत में राजपूताना उक्त भूभाग (सन् 1908 तक की स्थिति पर बेले की रिपोर्ट) पर तीन शक्तिशाली जातिय राज्यों (Tribal Dynasties) का प्रभुत्व था। प्रथम कन्नौज के राष्ट्रकूटों (राठौड़) का कन्नौज को राजनैतिक केन्द्र बनाकर पश्चिमी भारत में यमुना नदी से सिन्ध तक शासन था। अलमरूड़ी लिखता है कि कन्नौज के शासक सिन्ध–हिन्द के अधिपति थे। कुछ भी हो इन विदेशी लेखकों व भूगोलवेत्ताओं के विवरण से यह स्पष्ट होता है कि राजपूताना का विस्तृत भाग गुर्जर प्रतिहारों (मण्डोर)/कन्नौज के राष्ट्रकूटों/मारवाड़ के राठौड़ वंश के आधिपत्य में था। दूसरा राजवंश जिसने राजपूताना के दक्षिण व पश्चिमी भूभाग में अन्हिलवाड़ा को राजनैतिक केन्द्र बनाकर सोलंकी (चालुक्य वंशज) राजवंश का उत्तर पश्चिमी भारत पर प्रभुत्व था। तृतीय राजवंश में मुहम्मद गौरी के आक्रमणों के पूर्व अजमेर के चौहान वंश का आधिपत्य था।[10]

उत्तर भारत में अरावली एवं विशाल मरूक्षेत्र से सुरक्षित सिन्ध व हिन्द में मेवाड़ में गुहिल सिसोदिया राजवंश (उदयपुर मेवाड़) का 8वीं सदी से दीर्घकाल तक आधिपत्य रहा। इस प्रकार पश्चिमी भारत में राठौड़ों एवं सोढ़ा (भाटी राजवंश) वंशज राजपूत जाति का उत्तरी–पश्चिमी भू–भाग पर प्रभाव था। राजपूताना के पूर्वी क्षेत्र की तरफ जयपुर को केन्द्र बनाकर कच्छावा राजपूत जाति ने आधिपत्य जमा रखा था।

वस्तुतः राजपूताना के विस्तृत रेगिस्तान के कारण अरबों का सिन्ध आक्रमण असफल रहा। राजपूत शासकों ने मुस्लिम आक्रमणों का न केवल प्रतिरोध किया वरन् गुर्जर प्रतिहारों व मेवाड़ के गुहिल शासकों ने अरबों को परास्त किया। अखिल भारतीय राजपूत शासकों के संघ में कश्मीर, कन्नौज, मेवाड़, गुजरात व मालवा के राजपूत शासकों ने मुकाबला किया। इस प्रकार अरावली पर्वतमाला एवं विस्तृत रेगिस्तान के कारण राजपूताना में राजपूत राज्यों का अस्तित्व था।

## 2.3 स्वाधीनता के लिए विदेशी आक्रमणों का प्रतिरोध –

भारत पर प्रथम मुस्लिम आक्रमणों (सिन्ध पर अरब आक्रमण) के दौरान राजपूत राज्यों के इन विभिन्न जातीय वंशजों ने देश के प्रमुख नगरों को केन्द्र बनाकर प्रभुत्व बना रखा था। इस वक्त गंगा यमुना के दौआब–सिन्ध–उत्तर पश्चिमी राजपूताना, मालवा व गुजरात, उत्तर प्रदेश के प्रमुख नगरों लाहौर, दिल्ली, कन्नौज, अयोध्या व अजमेर जैसे प्रसिद्ध नगरों एवं विस्तृत भूभागों पर अधिकार था।

पंजाब पर आक्रमण करने के बाद महमूद गजनवी ने 1017 ई. में कन्नौज पर आक्रमण किया। वह मथुरा पहुँचा। कुछ वर्षों बाद महमूद गजनवी ने लाहौर व पंजाब को फिर आक्रमण कर घेरा। अतुल धन प्राप्त

कर उसने इसी लालच व इस्लाम के प्रचार के उद्देश्य से सन् 1024 ई. में उसने गुजरात के सोमनाथ पर आक्रमण किया। इसी दौरान उसने मथुरा से राजपूताना के केन्द्र स्थल अजमेर पर आक्रमण करने के बाद सोमनाथ मन्दिर पर आक्रमण किया, परन्तु राजपूताना के राजपूतों ने महमूद गजनवी के आक्रमणों का शक्ति से मुकाबला किया। इस समय गुजरात के अन्हिलवाड़ा के सोलंकी राज्य व आबू के परमारों (चन्द्रावती के शासकों) से भयभीत होकर सिन्ध के मार्ग से अपने क्षेत्र गजनी शहर की ओर लौटने को विवश हुआ। सन् 1170 में गुजरात के अन्हिलवाड़ा के सोलंकियों व अजमेर के चौहान राज्य में युद्ध हुआ। इस भयानक युद्ध में अन्ततः सोलंकी राजवंश को भारी क्षति हुई, इसी समय अजमेर के चौहानों व कन्नौज के राठौड़ राजवंश में परस्पर युद्ध हुआ। इन राजपूत राज्यों के इस परस्पर जातीय राज्यों के संघर्ष का लाभ उठाकर शहाबुद्दीन गौरी ने 1193 में तराईन के युद्धों में उत्तर भारत पर अपना प्रभुत्व जमा लिया। जब तक सन् 1194 में चन्दावल में जयचन्द को गौरी ने समाप्त कर कन्नौज पर अधिकार नहीं किया तब तक राजपूत राज्यों ने मुस्लिम आक्रमणों का अपनी परम्परागत नीति पर चलते हुए प्रतिरोध किया।[11]

वीर शिरोमणि प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रताप का जन्म वि.सं. 1597 ज्येष्ठ सुदी 3, रविवार, दिनांक 9 मई सन् 1540 ई. को सूर्योदय से 7 घड़ी 13 पल के समय पर हुआ था। उनके परिजनों में पिता उदयसिंह, माता जेवन्ती बाई सोनगरा, बहन हरकुंवर बाई, भ्राता शक्तिसिंह, जगमाल, सगर, महेशदास इत्यादि। उनका पुत्र कुंवर अमरसिंह था। पिता उदयसिंह की मृत्यु 28 फरवरी 1572 में गोगुन्दा में हुई। उसी दिन प्रताप का राजतिलक गोगुन्दा में हुआ। वर्तमान में गोगुन्दा के महल के निकट एक चबुतरा एवं छतरी बनी हुई है। जहाँ प्रतिवर्ष प्रताप जयन्ती पर मेला

लगता है। 19 जनवरी 1597 को चावण्ड में प्रताप की मृत्यु हुई। जहाँ बण्डोली नामक स्थान पर उनका स्मारक बना हुआ है। प्रताप के जीवन और उनके कार्यक्षेत्रों से सम्बन्धित स्थलों में चित्तौड़, कुम्भलगढ़, हल्दीघाटी, उदयपुर, गोगुन्दा, सायरा, मचीन्द, रोहिड़ा, उबेश्वर, कमलनाथ – आवरगढ़, दिवेर, जावरमाला, बलिया, परसाद, चावण्ड हैं। जो देश–विदेश के पर्यटकों के लिए प्रेरणा स्थल है।

जब 1568 में भारत गौरव मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़ पर मुगलों का आधिपत्य हो गया और वह भी हजारों राजपूत नर नारियों के रक्तपात जौहर के साथ ही असंख्य निर्दोषों ब्राह्मणों, वैश्यों समस्त वर्गों पर अत्याचार, शोषण, दमन को देखते हुए पिता उदयसिंह के मुगल विरोधी स्वदेश, स्वधर्म की रक्षार्थ महाराणा प्रताप उदयपुर गिरवा में स्थापित नवीन राजधानी से गोगुन्दा, कुम्भलगढ़ में रहते छापा मार रण प्रणाली से पिता की मृत्यु सन् 1572 तक लड़ता रहा। पिता की मृत्यु के संकट में उदयसिंह के चहेते पुत्र जगमाल के गद्दी पर बैठने, अन्य भाइयों द्वारा मेवाड़ राज्य का विभाजन में अकबर ने मेवाड़ राजघराने में फूट डालकर प्रताप को सिंहासन राज्यविहिन करने की कुटनीति अपनायी, परन्तु मेवाड़ के स्वामी भक्त सामन्तों ने गोगुन्दा में जगमाल को राजपद से हटाकर महाराणा प्रताप को सिंहासनासिन कर उसके साथ मेवाड़ की स्वाधीनता के लिए व सभी सामन्तों, सलाहकारों ने एकजूट होकर प्रताप की ''मेवाड़ धरा आजाद रहे'' यानि तलवार की शपथ, घोड़े की शपथ, वीर भूमि मातृभूमि चित्तौड़ की शपथ लेकर आगामी 25 वर्षों तक सीमित, आर्थिक व सैन्य संसाधनों के होते हुए भी महाराणा प्रताप के साथ आम जन–जन ने समर्पण के साथ सहयोग दिया। उदयपुर से चित्तौड़ के बीच ब्राह्मण, गुर्जर, जाट, भील इत्यादि सभी वर्ग के लोगों ने मेवाड़ की रक्षा में जो भूमिका

निभाई की वह प्रताप के महान त्याग, उज्जवल चरित्र, उच्चादर्शों के कारण ही सम्भव था। यह एक दीर्घकालीन जनयुद्ध था। जिसमें शस्त्रोपजीवी मालवीय, लौहार, गाडोलिया लुहार, सुथार, जाट जणवा, वैरागी, तेली, माली, सेवक, चारण, राव, भाट, भील जैसे सभी लोगों ने मेवाड़ के मैदानी व अरावली की पर्वतमाला में मुगलों के विरूद्ध देश की आजादी का संघर्ष किया था।

**पाद टिप्पणियाँ –**


1) महाराणा प्रताप स्मृति ग्रंथ डॉ. देवीलाल पालीवाल सम्पादित, साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ उदयपुर, पृष्ठ 84–85

2) महाराणा प्रताप जे. एम. शेलेट

3) गौ.शं. हीरा चन्द ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, प्रथम भाग

4) टॉड राजस्थान, हिन्दी अनुवाद – केशव कुमार ठाकुर

5) कविराज श्यामलदास, वीर विनोद, प्रथम एवं द्वितीय खण्ड

6) टॉड राजस्थान, अंग्रेजी अनुवाद, ब्रुक्स

7) आईन–ए–अकबरी, भाग 3, हिन्दी अनुवाद, मृदुल

8) मेवाड़ रेजीडेन्सी, गजेटियर, 1909 के. डी. अर्सकिन

9) ब्रुक्स, हिस्ट्री ऑफ मेवाड़

10) मेवाड़ के महाराणा और शहंशाह अकबर, श्री राजेन्द्र शंकर भट्ट

11) ''दी रूलिंग प्रिंसेज चीफ्स एण्ड लीडिंग परसर्नस इन राजपूताना एण्ड अजमेर'' – सी. एस. बेले, सन् 1908